Gaayatrii Parinay Naatak

No details available

श्री श्री राधारमणो जयति ।

गायत्री परिणय नाटक ।

" प्रथम अंक "

नांदी आर्या

होते जिस से जग के, जन्म स्थिति प्रलय और जिस में । चैतन्य चंद्र सो ही, पूरण करु काम प्रेम विस्तारी

नांदी के अनन्तर ।

सूत्रधार अलं बिस्तरतः । प्रिये ! इधर इधर !

नटी—(प्रविष्ट होकर) स्वामिन् ! क्या आज्ञा है ? क्यों इस समय असमय में इस दासी का स्मरण किया है ? मेरा सब काम अधूरा पडा है ।

नट—सुंदरि ! आजकल स्कूल की छुटिओं के कारण बडे बडे अध्यापक पंडित यहां एकत्र हैं । सबके प्रधान महा महो पाध्याय षडानन शास्त्री जी ने आज्ञा की है कि "सूत्र धार ! हमारे इस अवकाश के समय के प्रमोद बर्द्धन के लिये कोई नाटक खेलो,,-मुझे उनकी आज्ञा पालन करनी है । ये देखो प्रिये ! कैसा विद्वत्समाज उपस्थित है

'कोई पगडी कमरी पहरैं कोई सिर्फ डुपट्टा । कोई दाढी मूछ मुछंदर कोई सिर सिलपट्टा । कोई लिये तालका पंखा कोई सुघनी दानी । कोई अधिक विनीत पढहू कोई अनपढ अभिमानी

इनके मनोरंजन को कोई नाटक खेलना चाहिये।

नटि—ये सब प्रकांड पंडित है हम इनका क्या मनोरंजन करसकेंगे ?

नट—कोई ऐतिहासिक नाटक खेलें

नटी—नाटक तो सब ऐतिहासिकही होते हैं "विक्रमोर्वशी" "अभिज्ञान शाकुंतल"

नट—ये पुरानी बाते है आजकल की नाटक कंपनीओं में हंसी दिल्लगी है रस वा शिक्षा नहीं होती।

नटी—तब क्या कोई संस्कृत नाटक खेलें

नट—नहीं आजकल 'हिन्दी साहित्य संमेलन' और 'नागरी-प्रचारिणी' की कृपा से संस्कृत भाषा की कोई कदर नहीं रही पंडित जन भी संस्कृत छोड भाषा में ही भूल रहे हैं।

नटी—(सोचकर) तौ वही नाटक खेलें।

नट...."गायत्री परिणाय" वही ठीक हैं।

नटी....खेलें क्या! यह पंडित मंडली के साथ के विद्यार्थिओं के कलकलमे तौ कानंपडी नहीं सुनाई पड़ती है

नट....(हंसकर) इसके चुप करदेने का उपाय तुम जानती तो हो।

नटी....क्या ?

नट....वही मधुर गान! जहां तुमने कोकिल विनिन्दित मधुर स्वर से गान आरंभ किया और यह सब हल्ला बंद हुआ

नटी....तौ क्या गान करूं ?

नट....यही वर्तमान समय

नटी....गान करती है

देखो ये सघन कैसे घन छाये, छाये हैं घन वन माहि।
प्यारो पुरवैया वायू व ह रह्यो, जलधरनभ सरसांहि। देखोये०
चहुं दिस दामिनी दमकती गरज गंभीर डरांहि। देखोये०

बरसत धुरवा धरनि पै पद पदधार धरांहि । देखोये०
मोर करैं दादुर सब बिनन नाचत शिखि सुखपांहिं । देखोये
कुसुम कदंबन डह डहे मधुकर मुदित उड़ांहि । देखोये०
ताल खिजूर जामुन पकी डार रसाल झुकांहि । देखोये
हरि हरि दूब धरालसै देखत नयन सिरांहि । देखोये

नेपथ्यमें

चलौ सखि वाही नंदनवन झूलें
बोलत मोर चकोर कोकिला सुरसरिताके कूले। नंदनवन०
हम सब संगकी सखी सहेली खेल माल मन फूलें । नंदन०
गावें मधुर मलार मगन मन सावन सब सुख मूलें । नंदनवनझू०

नटी—(उत्कर्ण होकर सुनकर) आहा यह गायत्री अपनी सखियों सहित नंदनवनमें झूला झूलने आती है इसका तेज सूर्यके समान है आंखें चौंधी जाती हैं । चलो प्रिय ! हम यहां से निकल चलें ॥

नट....चका चौंधीसे मार्ग भी नही दीखता है ॥

(आंख मींडते मींडते दोनों जाते हैं)

प्रस्तावना

(स्थान नंदनवन की तमालवाटिका)

(गायत्री झूला झूल रही है सावित्री पंक्ति तृष्टुप जगती आदि सखिएं झूला रही हैं)

(गायत्री....गाती है)

आओ आओ आओरी ! सखि ! गाओ गाओ गाओरी
उसी देव–देव सविता की जैजैकार मनाओरी ।
वरन योग उस भर्ग तेजको मन लगाय कर ध्याओरी ।
करै–प्रेरणा बुद्धि हमारी विनती यही सुनाओरी (१)

(१) इसमें गायत्रीका समस्त स्वरूप है बुद्धिमान् विचार लेंगे एक भी पद का अर्थ नहीं छूटा है ।

सावित्री—सखि ! पंक्ति ! देख गायत्रीका कैसा मीठ स्वर है अकेली गाय रही है तौ भी कैसी झीलकी आवाज लगती है

पंक्ति—तेरी आवाज क्या कुछ कम है तू भी कुछ गा,

सावित्री—(पंक्ति की बांई भुजा दबाकर) चल तू ऐसी ही वातें बनाया करै ! और तौ !

जगती—हां सावित्री ! गावै क्यों न ? योंही नखरे किया करै है ! बडी एक ?

गायत्री—(झूला मे झुककर) नखरे सासरे जाकर करियो सखी सहेलियोंमें क्या नखरे !

सावित्री—सासरेमें बहन ! तेरे नखरे होंगे हमारा क्या है तू राजकन्या ठहरी ॥

गायत्री—(अनसुनी कर झूलने लगी)

पंक्ति—सुपर्णी (२) रानी उस दिन देवसे कहती थीं "गायत्री बड़ी होगई है अब इसके विवाहका विचार करना चाहिये "॥

जगती—देवने क्या कहा ?

पंक्ति—कहा "हमारा विचार इसको स्वयं बरा करने का है जिस में इसका चित संतुष्ट रहै "

जगती—तब क्या स्वयंबर होगा ॥

पंक्ति—मा सुपर्णी ने कहा "यह अभी बालक है कच्चामन है कोई बातकी स्थिरता नही है ०कभी ब्रह्माको कभी शिव

---

(२) वैदिक इतिहासमें देवमाया सुपर्णी से छंदोंकी उत्पाति है गायत्रीकी उत्पाति है, इसीसे सुपर्णी गायत्री की माता रूपसे कल्पित है देखो यजुर्वेद शतपथ ब्राह्मण कां० ३–प्र०५ब्रा० १ अं० ३ । ८

त एते माये अस्टजन्त सुपर्णीच कद्रूच............

साछंदासि सस्टजे सागायत्री दिवः सोम माहरत् ।

को कभी विष्णुको देखकर मोहित होजाती है (३) प्रभात एकका तो मध्यान्हमें दूसरेका गुण वर्णन करती है इसमे इसका स्वयंवर न कर प्रदान करना ही उचित है ॥

गायत्री—अन्य मुख होकर सुनती है और लम्बे झोटाओ से झूलती है

सावित्री—जीजी विवाह की बातें गुट गुट सुन रही है हा हा हा !

गायत्री—(क्रोध कर) अब में तुम्हारे साथ झूलनें नं आया करूंगी !

सावित्री—(हंसकर) अबही नही जब विवाह होजाय तब हमारे साथ नही फिर अपने दूल– [जीभ दाबकर चुप होजाती है]

पंक्ति—बस ! जीभ मत चलावे होगई तेरी चबर चबर अबतू गा नहीं मुझसे बुरा कोई नहीं है ।

सावित्री····(गुनगुन कर गान आरम्भ करती है और मुस-कुराकर चुप होजाती है)

गायत्री—(झूला से झुककर) ये अकेली न गावेगी कोई संग गवाओ ॥

---

(३) स्मार्त विधानमें त्रिकाल संध्यामें गायत्री को ब्रह्मा कि शिवकी और विष्णुकी शक्ति मानते हैं देखो आवाहन

प्रात:काल—गायत्रीं त्र्यक्षरां बालां साक्षासूत्र कमंडलु रक्त वर्णां चतुर्हस्तां हंस बाहनसंस्थितां····ब्रह्माणीं ब्रह्मदैवत्यां ब्रह्मलोक निवासिनीं

मध्यान्हमें " वृषभारुढां ·······रुद्राणीं रुद्रदेवत्यां "

सायंकालमें " गरुडासन संस्थितां वैष्णवीं विष्णु दैवत्यां "

बृहत्पाराशर----'पूर्वसंध्यातु गायत्री ब्रह्माणी हंसवाहना'·········

'संध्यामाध्यान्हिकी श्वेता सावित्री रुद्रदेवता वृषेन्द्रवाहना देवी'······

'सन्ध्या सायन्तनी कृष्णा विष्णुदेवा सरस्वती ।'

जगती—(सावित्री की पीठमें नोंच कर) ले बोलमें गवाती हूं (दोनों गाती हैं)

फूले कदम कुसुम वन आली

हरित छदन सुम अरुन वरनके उदित दिवाकर मनुप्रति डाली।

तरुन तमाल श्यामघन मेदुर भई विपिन धरनी सब काली।
अंकुर सघन तृनन तटनी तट लसत बलारि बधूगन लाली
स्वेत छतान फवी सुन्दर छबि उडगन भूतल करत विचाली ॥

गायत्री—(पर्ण वृक्ष को देखकर) अहा ! मैं जब श्येनरूप धरकर तृतीय स्वर्गसे ' सोम , लिये आती थी और कृशानुने बाण फेंका था तब सोमका पत्र मेरा पंख और बांएं, पामका नख कट कर गिर गया था उसीसे यह ' पर्ण ' वृक्ष हुआ है।

इसीसे इसके पुष्प श्येन पक्षीके नखके समान हैं इसका रस निश्चय सोम रस है (४)

पंक्ति—सखी ! एक वार तुम देवता और असुरों के विवादमें मध्यस्थ भी तो हुई थीं ॥

गायत्री—हां मैं मध्यमें थी एक ओर देवगण और एक ओर असुर थे। देवगण ने अग्नि को दूत बना कर मेरे पास भेजा था और असुरों ने सहरक्षा को भेजा था मैं अग्नि के ओर गई थी। (५)

जगती—(गायत्री का रूप देखकर स्वगत) आहा

---

(४) यत्र वैगायत्री सोम मच्छापतत्तदस्या आहरन्त्या अपादस्ता भ्यापत्य पर्णं प्रचिच्छेद गायत्र्यैवा सोमस्यराज्ञः तत्पतित्वा पर्णो भवत्तस्मात् पर्णोनाम तद्यदेवात्र सोमस्यन्यक्तं तदिहाप्यसदिति । यजुर्वेद शतपथ ४ का० ५ प्र० २ ब्रा० ३ कंडी

(५) देवा श्चैवा सुराश्चोभये प्रजापत्या पस्पृधिरे तान् स्पर्द्धमानान् गायत्र्यंतरा तस्थौ। यजुर्वेद शतपथ १ का० प्र० ३ ब्रा० ३४ कं.

गायत्री का कैसा लावण्य है। इस वर्षा के समयमें इसके गोरे अंगपर लहरिया कैसा फवा है (प्रकाश) गाती है।

लहरिया झूलत लहरें लेत।
गोरे रंग अंग दुति दमकत दिनकर जलद समेत
अंचल उडत समीर झकोरन इन्द्रधनुष छवि देत।
शोभा जलधि शरीर तरंगत बेनी बंधन सेत।

नेपथ्यमें गर्जन ध्वनि

सब ऊपर को देखती हैं

पंक्ति----यह कैसी डरावनी घटा है देखते देखते सबरे आकाश मे छायगई ॥

सावित्री----हाय विजली कैसी चमकती है। दिनमें ऐसी कौंध !

जगती----गडगडा हट से तौ कान फूटे जाते हैं ॥

सावित्री----देख ! गायत्री जी जी कैसी डरप रही है ॥

गायत्री----(अवाहि त्थाकर) नहीं मै तौ हँस रही हूं (गाती है)

आई सघन घटा नभ कैसी।

पंक्ति----चलत पवनपुर वाई सननन दामिनी दमक डगावत तैसी।

जगती----(वर्षा देखकर) धुरवा पडत हाय धारनसों गर्जन प्रलय समय की जैसी।

सावित्री----(डरकर) अवला हमवाला सबवनमें भई दशा कवहू नहि ऐसी ॥

नेपथ्यमें भयानक गर्जन ध्वनि होती है सब डरकर भागती हैं। वज्रपात होता है।

द्वितीय अंक
स्थान देव भवन

सुपर्णी कद्रू रुद्राक्ष माला स्फटिक माला संध्या आदि यथा स्थान बैठी हैं।

कद्रू····देखो जी वर्षा ऋतुकी कैसी शोभा है।

सुपर्णी—ऐसे सुख और शोभा के प्रावृष समयमे भी न जाने मेरा मन क्यों आज उदास है।

रुद्राक्षमाला----रानी जी ! आपको कुछ हृदय का रोग होगया है मन प्रफुल्लित नही रहता है॥

कद्रू----देव बारबार बाहर रहते हैं इससे मन उदास रहता है॥

सुपर्णी----(हंसकर) तुमतो बहन ! सबका मन अपनासा जानती हो॥

कद्रू----मुझे चाहे कोई वर्ष छै महीना छोड़कर बाहर रहै तब भी ऐसी उदास नही होती, मैं तो अपने इन बालबच्चोंमें मगन रहती हूं॥

सुपर्णी----आज सवेरे जबमें सोयकर उठी थी तब मेरी दाहिनी आंख फरकने लगी थी। तबही से मन उदास है।

रुद्र माला----बीबी जी को बुलालाऊं उनसे आपका मन लगजायगा।

कद्रू----आज गायत्री गई कहां है ?

सुवर्णी----सबकी सब झूलने गई है।

नेपथ्यमें गर्जन ध्वनि

स्फटिक माला (६) (अपटी क्षेपसे आकर) ऐसा

---

(६) स्मार्त विधानमें गायत्री जप स्फटिक माला रुद्राक्ष माला पर होता है।

मूसलधार मह बरसता है आते आते सराबोर हो गई, कान मैं आंखें चौंधगई गरज सुनकर माथा फट गया जाने कहीं बिजली पड़ी।

नेपथ्यमें (नंदनवनमें नंदनवनमें)

सुपर्णी—(चौंक कर) क्या नंदनवनमें बिजली पडी हाय! वत्सा गायत्री वहीं गई है (अज्ञानसी होती है)

कद्रू—क्या गायत्री झूलने नंदनवन में गई है।

स्फाटिकमाला—और क्या वहीं का तो मन मूबा था

कद्रू—यह क्या हुआ।

सुपर्णी....(मूर्छामें उन्मादसे प्रलाप करती है) हाय वत्से! गायत्री! तेरा कुशल तो है। हाय! यह क्या अनर्थ हुआ।

कद्रू—हैं हैं, है क्या! तुम क्यों व्याकुल होती हो।

सुपर्णी—(प्रलापमें) हावत्से! गायत्री! हाप्राणाधिक-कन्यके! तू मुझे छोडकर कहां गई। हा देव! तुम कहां हो तुम्हारी प्यारी बेटी 'गायत्री' कहां है?

कद्रू—बहन! थिर होओ तुम सदा अपने मनमें अमंगल ही विचारा करती हो बडी बहमन हो।

नेपथ्यमें कलकल ध्वनि

सब—चमकित होकर देखती हैं।

(सुप्तोत्थित के समान अर्द्ध बाह्य ज्ञानमे लटपटाती गायत्री आती है। सावित्री और पंक्ति उसे दोनो ओर से पकडे आती हैं। पीछे और सब सखी धीरे धीरे आती हैं)

कद्रू—रानी जी! रानीजी! तुम योंही व्याकुल होती थीं लो देखो वह गायत्री आई।

सुपर्णी—गायत्री का नाम सुन अर्द्धवाह्य ज्ञानमें उठकर बैठती है और इधर उधर देखती है (गायत्री को देखकर)

आवत्से ! (गोदमें लेती है)

गायत्री—(पूर्वार्द्ध शरीर से सुपर्णी की अंकमें लेट जाती ह । और सुपर्णी के कंठमें हाथ गेर कर अधखुली आंखों से देखती है)

सुपर्णी—(हर्ष विषादसे) वत्से ! क्यों ? क्या हुआ ? यह क्या दशा है, कह तो ?

गायत्री (अस्फुट शब्दोंमें) मा ! में झूल रही थी....सब

महेली....साथ थीं धुरवा पडने लगे....बिजली चमकी गर्जन होने लगी आंखें चौंध गई में डरके मारे अचेत होगई । ये सब पकड़ कर मुझे यहां ले आई (आंख मीचकर चुप हो जाती है)

सुपर्णी (आश्चर्यसे सखिओं की ओर देखती है ।

सावित्री--अंब ! जीजी को चेत नही रहा (लंबे स्वास लेती है) बड़ा गजब होगया (रोती है)

कद्रू—(सावित्री की पीठ पर हाथ धर कर) रोती क्यों है वत्से ! धीरज धर अब क्या भय है ।

सावित्री—मा ! जो हम सब डरकर भाजे और वज्रपात भया हायरे ! (विह्वल होती है)

स्फटि० माला (धीरज धराकर) कहो बीबीजी ! अब क्या डर है ।

सुपर्णी—(भीत और व्याकुल होकर) तब ? तब ?

सावित्री....जीजी का सिर [कांपती है आंख मीचती है]

सुपर्णी....क्या सिरमें चोट आगई (गायत्रीसे) देखूंवत्से कहां लगी ?

कद्रू....वत्से ! सावित्री ! ' सिर ' सिर में क्या हुआ ?

सावित्री....(भग्न स्वर से) शरीर से अलग होगया [७]

सुपर्णी....[मूर्छित होकर गिरा चाहती है रुद्राक्षमाला पीछे सहारा लगाती है]

कद्रू....रानी ! स्थिर होओ अब तो तुम्हारी बेटी गोदी मे है अब क्यों इतनी विकल होती हो चेत करो चेत करो ।

दासी–[पंखा करती है जल छींटती है]

सुपर्णी–[सज्ञान होकर] सवेरे से दाहनी आंख फरकती थी हृदय बैठा जाता था वही हुआ (गायत्री की टोडी पकड कर] वत्से ! तेरा जीवन पदपद में विपद संकुल है [लंबी सांस लेकर] हाय ! तब ?

पंक्ति–बृहस्पति ने अपने हाथों में ले लिया [विवश होती है]

स्फटि० माला–बी बी ! स्थिर होओ ! अब आनन्दके समय उदासी क्यों ? मंगल गाओ अब क्या दुख है दुःख तो टल गया ।

सुपर्णी–तब ।

पंक्ति–हम सब व्याकुल होगई आंखों में अंधेरा छा गया न जाने उसी समय एक श्यामसुन्दर कमल दल लोचन

---

[७] वषट्कारने वज्र होकर गायत्री का सिर छिन्न किया था । "वषट्कारो वैगायत्रियै शिरोऽछिनतस्यै रसः परापतत् तं वृहस्पति रुपा गृह्णात्" कृष्ण यजु संहि० कां० २ प्र० १ अनु० ७ खं० १

यही कारण है कि किसी मंत्रका 'शिरोमंत्र' भिन्न नही है केवल गायत्री का शिरोमंत्र भिन्न है । जो सज्जन संध्योपासन करते हैं वे जानते हैं गायत्री भिन्न है, ' गायत्री शिरोमंत्र ' भिन्न है ।

बहुतेसे तत्वानुसंधाताओंका विचार है कि तंत्र मार्गमें दश महा-विद्याओं में जो एक 'छिन्न मस्तादेवी' है वह इसी गायत्री के शिर छेदन के मूलपर है ।

गोप किशोर कहां से आय गया उसने चट बृहस्पति के हाथों से
शिर ले गायत्री के अंगपर धर न जाने क्या किया जीजी वह
जागउठी ।

सब—[बड़ी प्रसन्न होकर] धन्य ! धन्य ! ऐसापरोप
कारी कौन है ।

सुपर्णी—जिसने मेरी वत्सा की प्राण रक्षा की है जिसने
मेरे प्राणों की रक्षा की है मैंतो उसे पाऊं तो उस पर अपने प्राण
भी न्योछावर कर दूं ।

गायत्री—(आंख मीचकर स्वगत) उस नव जलधर श्याम
कोटि कामाभिराम का क्या फिर दर्शन होगा, उनके अभय
हस्तके स्पर्श से जाने में आनंद समुद्रमें डूब गई थी। प्राणबंधो
यदि आपने अकारण कृपासे इस दासी को जीवन दान दिया
है तो यह जीवन बृथा न जाय इसे अपने ही चरणों में स्थान
दीजिये (उस रूपका स्मरण कर आनंद मग्न होती है)

सुपर्णी—वत्से ! गायत्री यह कौन था तू जानतीहै !

गायत्री—मिचे नेत्रोंसे सिर हिलाती है ।

(अपटि—क्षेपसे विश्वामित्र का प्रवेश)

विश्वामित्र----अब गायत्री को उपयुक्त वर मिळ जायगा

सब उठकर प्रणाम करती हैं ।

विश्वामित्र----रानीजी ! आजका दिन था तो बडा अमं
गलका पर अब तो परम मंगल का है । मंगल गाओ ढोल
धराओ बतासे बांटो ।

सुपर्णी----यह कौन करुणापारावार था जिसने आज
मेरी वत्सा को पुन जीवन दान दिया !

विश्वामित्र----वही सप्तकोटि महामन्त्र मौलि ' मंत्रराज

सुपर्णी----मंत्रराज कौन ?

विश्वामित्र----अष्टादशाक्षर श्रीगोपाल मंत्र (८)

सुपर्णी----क्या वे इस कन्याको ग्रहण करेंगे ?

विश्वामित्र----मैं तो यही कहने आया था ऐसा उत्तम बर त्रिजगत् में न मिलेगा !

(देव, चतुरानन, और सुरगणका प्रवेश)

(सुपर्णी कद्रू घूंघट खींचती है । गायत्री आदि कन्यागण एक ओर खड़ी होती है माला आदि अनुचरी गण दूसरी ओर)

देव----(गायत्री के सिर पर हाथ धरकर) वत्से ! आज में निश्चिन्त हुआ ।

चतुरानन----मैंने कई वार कहा था इसका शिर च्छेद होगा, इसके ' शिरकुंतन ' योग था ।

देव----आपज्ञान के आदि गुरू हैं ।

चतु----यह भी तो कहा था कि यह अमर है ।

विश्वामित्र--देव ! मंत्रराज को ही इसे प्रदान करना उचित जान पड़ता है ।

चतु०--यह तो निश्चय ही है ।

गायत्री--(स्वगत) ले मन ! जोतू चाहता था वही होता है । अब तो जीवन सार्थ होगा ।

देव--उनको लावेगा कौन ?

चतु--नारद को भेजा है ।

(८] वेदमें प्रजापति ही आद्य और सर्व श्रेष्ठ देवता है । प्रजापति वैं कः प्रजापतिमुत्रा अनु सेंवदेवाः । यजुर्वेदशत०का० १ ३ प्र० ३ ब्राह्म० ५ कं० ३

वह सप्तदश है " एषएव प्रजापतिः सप्तदशः सर्वंवै प्रजापतिः शतपथ प्र० ३ ब्रा० २ कं० १०

अष्टादशाक्षर होनेसे प्रजापतिसे आधिक्यके कारण 'मंत्रराज' संज्ञा है ।

(नेपथ्यमें मंत्रो का अव्यक्त शब्द)

चतु०--(सुनकर) वो आये ॥

सब--(उत्सुक होकर मार्ग की ओर देखते हैं)

(मंत्रराज नारद और कतिपय मंत्रों का प्रवेश]

(सुपर्णी कद्रू दोनों रानी और कन्यागण बडी लालसासे मंत्रराज को देखती है]

साबित्री—(गायत्रीके कानमें) ले अब तो सासरे जायगी नखरे करेगी ।

गायत्री....(कृत्रिम क्रोधसे) चल हट मुझसे न बोल ।

सावित्री—हां बहन ! दूलह मीले पीछे सहेलियों से कौन बोलता है ।

गायत्री—(हटकर दूर खडी होजाती है)

देव--भगवन् ! हिरण्य गर्भ ! आप मेरी ओरसे मंत्रराजसे प्रार्थना कीजिये ।

चतु--मंत्र महेन्द्र ! देव, आपसे कुछ प्रार्थना करते हैं ।

मंत्रराज--(समंदस्मित) निःसंकोच !

चतु--गायत्री को आपके समर्पण करते हैं आप अङ्गीकार करैं ।

मंत्रराज--नारद का मुख देखते हैं ।

नारद--आप सप्तकोटि महामंत्रों के अधीश्वर हैं यह गायत्री आपकी उपयुक्त पत्नी है ।

मंत्रराज--[नारद के कान में कुछ कहते हैं)

सब (सशंक परस्पर देखते है)

गायत्री (दीर्घ निश्वास लेकर स्वगत) हृदय ! यह तेरी आशा दुराशा है तुझे श्यामसुन्दर की सेवा कहां तू तो इन देवताओं के सोम लाने, और झगडे मिटाने मे ही, जीवन बिता, 'वैतानिक अग्निके' तापसे तप्त रह, इस शीतल चरण कमल की

छाया तेरे भाग्यमें कहां ?

नारद--(ब्रह्माजी के कान में) मंत्रराज गोप जाति हैं [९] गोपललना भिन्न अन्य का स्पर्श नहीं करते ॥

चतु--[हंसकर] यह तो आपका स्वभाव है जो निकट आवे उसे परीक्षा के अर्थ उछटाना [१०] मैं दोनों पक्ष की शंका मिटाता हूं । गायत्री देव जाति नहीं है गोप जाति है ।

गायत्री--[स्वगत] मुझे स्वप्नका सा स्मरण है मैं गोपों के गृह में थी दधि विक्रय किया करती थी, क्या मुझे देव जाति मान कर, यह कोटि कंदर्प सुदंर नवकिशोर त्याग जायगा, ऐसा करना था तो मुझे जीवन क्यों दिया, 'वषट् कारने' बज्र होकर शिर काट कर तो अच्छा ही किया था । यह क्या जो मृतकको जिलाना और उसै आजन्म विरह ज्वालामैं जलाना, यह तो जिलाना न हुआ जलाना हुआ [लंबे श्वास लेती है]

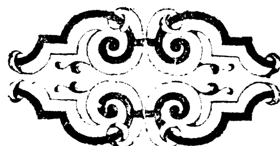
देव—हां गायत्री तो गोपांगना है इस की देव जाति तो माया सृष्ट है । देव कार्य साधन को' देव जाति' कल्प ना की गई है ।

मंत्र राज—[स्वगत] हां पाद्म कल्प में जब ब्रह्माने यज्ञ किया था और सावित्री को देर हो गई थी तब इन्द्र इसकी कनिष्ठा भगनी को दही बेचते से पकड़ लाया और ब्रह्मा से गांधर्व वि-

---

[९] विष्णु र्गोपाअदाभ्यः । ऋगवेद १ मंड. २२ सूक्त म. १८

[१०] रासमें गोपिओं से कहा "प्रतियात व्रजं नेहस्थेयं स्त्रीभिः सुमध्यमाः" श्री भाग. १० । २९ ।



व्याह कर दिया था [११]

नारद--तब विलम्ब क्यों ॥

गायत्री--[सावित्री से] दैवी माया ने मुझे भी मोहित कर रखा था, मैं तो गोपकन्या हूं सोम लाने के लिये ये मुझे पुत्री बना लाये थे। दो सुवर्णकी 'कुशिओं से' सोम रक्षित था वे दोनो चक्रके समान भ्रमती थीं, वहां जो जाता था वही कट जाता था गधर्व उस पर पहरा देते थे मैंने प्रथम दोनों कुशिओं को तोडा और 'सोम' ले आई [१२]

सावित्री--वही तो दीक्षा और तप हैं [१३]

चतु--क्या आज्ञा है।

मत्रंराज--जैसी तुम्हारी रुचि हो !

सब- जय ! जय !! जय !!! [पुष्पवर्षा करते हैं]

---

[११] पद्मपुराण स्टष्टिखं. १६ अध्याय....यज्ञ का समय हो गया साबित्री न आयसकी, ब्रह्मा जीने इन्द्र को भेजा कोई कन्या लाकर उसे पत्नी बनाना चाहिये इन्द्रने बड़ी सुन्दरी गोपकन्या देखी, पूछा तू कौन है, उसने कहा "गोपकन्यात्वहं वीर विक्रेतुमिह गोरसं नवनींत मिदं शुद्धं दधिचेदं विमंडकं.... एवमुक्तस्तदा शक्रो गृहीत्वातां करेदृढम् अनयत्तां विशालाक्षीं यत्रब्रह्माव्यवस्थितः रोदमानातुसादेवी क्रोशंती--पितृ मातरौ....एवंचींतापराधीना यावत्सा गोपकन्याका तावद्ब्रह्मा हरिं-प्राह यज्ञार्थं सत्वरंवचः देवी चैषामहाभाग गायत्री नामतः प्रभो। एव मुक्तस्तदा विष्णु र्ब्रह्माणं प्रोक्तवानिदं । विष्णुरुवाच। तदेता मुद्वहस्वाद्य मयादत्तां तब प्रभो गांधर्वेण विवाहेन विकल्पं मा कृथाश्चिरम्।

[१२] हिरण्मय्योर्ह कुश्योरन्तरवहित आस । तेहस्म क्षुरपवी--निमेषं निमेष माभि धत्तो। शतपथ का० ३ प्र० ५ ब्रा० १ कं० ९

[१३] तयोरन्यतरां कुशीमाचिच्छदे तांदेवेभ्यः प्रददौसादीक्षा अथ द्वितीयां कुशी माचिच्छदे तांदेवेभ्यप्रददौ तत्तपः। शतपथ का० ३ प्र. ५ ब्रा. १ कं. १० । ११

सावित्री—जीजी! प्रणाम।

गायत्री—[अन्तहित्यामें] में क्या हुआ ?

सावित्री—जो चाहते थे सो, और क्या!

गायत्री—(हँसकर लज्जित होती है

देव—गोपनंदन ! यह आपकी वल्लभा गोपांगना आपके करमें समर्पित है (गायत्री का हाथ मंत्रराज के करमें समर्पण करते हैं)

गायत्री—(स्वगत) यजमानों को पीठपर वहनकर स्वर्ग ले जाते ले जाते पीठ में ठेकें पड़ गई हैं । अब तो शांति मिलेगी प्राणेश्वर की सेवाकर सुखमें रहूंगी पन्खेदार्गी से तो प्राण बचे (१४)

सब आनन्द ध्वनि करते हैं।

नारद—'सत्य' वेदी परिस्कार करने गया है [१५]

(नेपथ्यमें मंगल गीत)

जोड़ी गायत्री मंत्रराज चिर जीयौ।
लख हुलसो त्रिजगत देव मनुज ऋषि होया '
हैं मंत्रराज सबके कृतज्ञता भाजन,
जिन गायत्री को जीव दान फिर दियौ।

---

[१४] सैषा गायत्री हारिणी ज्योतिष्पक्षा यजमानं स्वर्गलोक मभिवहति । यजुर्वेद शतपथ ११ का. २ प्र. ७ ब्रा. १६ कं.

[१५] मंत्रराज और गायत्री के विवाह के अनंतर गायत्री के गर्भसे चारों वेदोंका जन्म होगा । वेदोंके जन्मसे पूर्वका विवाह किस विधानसे हुआ ? यह हुआ 'सत्य' के विधानसे जो वेदसे नहीं होसकता है वह सत्यसे होता है। देखो यजुर्वेद शतपथ २ कां. १ प्र. ४ब्रा. १० कं.

यन्नर्चा नसाम्ना न यजुषाग्निराधीयते थ केनाधीयत इति ब्रह्मणो है ष ब्रह्मणाधीयते वाग् वै ब्रह्म तस्यै वाचः सत्यमेव 'ब्रह्म' ताश्च एता सत्यमेव व्याहृतयो भवंति तदस्य सत्ये नेवाधीयते।

धर विविध रूप गोविप्र अमर सुख मार्यै,
युगमन्वंतर छिन कल्प जगत हित कीयौ।
सुन चतुरानन की विनय सकल निज जनकी,
गायत्री कर निज अभय हस्तधर लीयौ।
हैं बड़े भाग सब ही के आज सुनो आली,
यह युगलरूप रस लोचन भर भर पीयौ।

चतु—विवाह मंडपपर ये सुवासिनी और कन्यागण मंगल गान करती हैं विवाह लग्न संन्निहित है।

मखराज गायत्री का हाथ पकड़ कर जाते हैं पीछे क्रमश सब जाते हैं।

जवनिका पतन।

द्वितीय अंक समाप्त

तृतीय अंक
स्थान भावराज्य

विधि भक्ति राग भक्ति. प्रेम. कंठमाला जपमाला तिलक मुद्रा तप्तमुद्रा अर्चन वंदन आदिका प्रवेश।

विधि भक्ति—हम पतित श्वपच चांडाल आदिको तारैं,
जो एक बेर भी श्रीहरि नाम पुकारैं।
नहीं धर्म कर्म कुल जाति चरित्र विचारैं,
सीधापथ श्रीहरि चरनन का निरधारैं।

मुद्रा—(तप्तमुद्रासे) बहन! तुमतो द्वारिका श्रीरंगक्षेत्र आदिक दक्षिण प्रांत में ही विचरती हो अन्यत्र तो कभी

जाती रहती हो (१६)

तप्तमुद्रा—सखि ! तुमने भी तो वृन्दावन ब्रजमंडल गौड़ देशको ही अपनी विहार भूमि करली है, कहीं कहीं गुजरात पंजाब में दीखती हो,(१७)मद्रास प्रांत में कभी नहीं आती

मुद्रा—वहां का जल वायु अनुकूल नहीं होता ।

तिलक—(कंठमाला की ओर देखकर हंसता है)

मुद्रा—(तीलक से) दादा ! तुमतो सर्वत्र परिभ्रमण करते हो ?

तिलक—जाता तो सर्वत्र हुं परन्तु देश देश और समय समयमें पोशाक बदलनी होती है (१८)

मुद्रा—माला का तुम्हारा अच्छा साथ है ।

तिलक—यह कहीं कहीं साथ भी रहती है कभी आगे बढ़ जाती है (१९)

राग भक्ति—श्रीमन् ! आज ही का तो वधू प्रवेश का मुहूर्त है ?

प्रेम—आहा ! अनंत शक्ति श्री भगवान् की अचिन्त्य लीला है 'वर्णमय मंत्र मूर्तिका' दर्शमयी गायत्रीके साथ विलास !

---

(१६) इसी प्रांतके वैष्णव तप्तमुद्रा अधिक धारण करते हैं ।

(१७) गोपी चंदनसे मुद्राधारण करने का प्रचार इन्हीं प्रांतोंमें अधिक है ।

[१८) सब देश और सब सम्प्रदायों के वैष्णव तिलक धारण करते हैं । और सब उसका एक ही नाम रखते 'ऊर्द्ध्वपुंड्र' किन्तु प्रकार भेद करते हैं यही एक होकर पोशाक बदलना है ।

(१९) कोई वैष्णव कंठलग्न [कंठी] माला सर्वदा धारण करते है कोई हृदय पर्यंत,और कोई नाभिपर्यंतकी लंबी माला धारण करते हैं । कंठमाला का 'साथ रहना' कहा जाता है, लंबी मालाका 'आगे बढ़ना' कहा जाता है ।

को आनव कैसे कहां कब तुव करत कहा ।
निगम अगम लीला सुनत आनन्द होत महा ॥

श्रमभक्ति—गोपांगना गायत्री के साथ श्रीगोपाल व्रजराज का विवाह अनुपम घटना है ।

प्रेम—'यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह' समस्त लीला समस्त वैभव ही अचिन्त्य है न कोई मनसे विचार सक्ता है न कोई वाणी से कह सक्ता है । 'रसो वै सः' श्रीभगवान् रसरूप हैं । 'रसंह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति' यह जीव रसको ही प्राप्त होकर आनन्द पाता है ।

राग भक्ति—मायाने जीव के ज्ञान को ऐसा आवरण किये है कि यह श्रीभगवान् की लीलामें भी बिना तर्क किये नहीं रहता ।

प्रेम—यही तो जीवका दुर्भाग्य है जो रम्य वस्तु में तर्क ! मिसरी तुम्हारे हाथ पर है मुखमें डालकर आस्वादन करो । जो यह तर्क करने लगे "मिसरी क्यों मीठी है संभव है कि नुनखरी हो । कहीं और सफेद वस्तु मीठी नहीं होती देखो फिटकरी सुहागा कोई मीठा नहीं तब मिसरी मीठी कैसे हो सकती है । जबतक युक्ति के द्वारा सिद्ध न हो मीठी नहीं मान सकते" वह दुर्भाग्य काहे को मिठास का स्वाद पावेगा । मिसरीका स्वाद वही पावेगा जो हाथ में आते ही मुखमें डाल गया । समस्त जगत् एक ओर होकर उससे पूंछता है मिसरी कैसी है ? वह कहता है 'मीठी' कोई पूंछता क्यों ? वह कहता है चाख देखो क्यों क्या ! वस भगवान् की भी लीला आस्वादन करना चाहिये, उनका माधुर्य पान करना चाहिये उसमें तर्क करना ही जीव का दुर्भाग्य है । बुद्धिमान् वही है जो तर्क त्याग कर भगवान् की लीला आस्वादन करै ॥

(नेपथ्यमें)

सींचो सुगंध जल मारग गेहद्वार,
रंभा सुपूग तरु रोपहु द्वार द्वार ॥
थापो घडाउदकपूरित दीपमाला;
श्री मंत्रराज सवभू भवन प्रवेश ।

सब उत्सुक होकर मार्ग की ओर देखते हैं ।

(श्रद्धा संध्या यज्ञोपवीत से अनुगम्यमान वर वेषसे मंत्रराज, और ग्रंथिबंधन सहित अवगुंठनवती (१९) गायत्रीका

---

(१९) राग भक्ति और प्रेमके संमुख गायत्री घुंघट काढती है अर्थात् मुंह छिपाये रहती है उनके संमुख नही होती । रागभजन--निष्ठ प्रेमिकजन 'संध्या गायत्री जप' आदिक कर्म की अपेक्षा नही रखते हैं । क्योंकि वे कर्माधिकार से उच्च भूमि पर हैं ॥
गायत्रीके अब गुंठनवती होने का वर्तमान में एक खास कारण भी है । जो उदार आर्यसमाज, भारत ललनाओं का पर्दा उठाता है, पर्दा को ही अवनतीका प्रधान कारण समझताहै, वह भी गायत्रीको पर्दानशीन रखता है । यद्यपि 'लैक्चरके प्लेटफारमपर' 'दीवारोंपर' 'चित्रोंके फ्रेमोंमें' गायत्री को खुले मुंह घूमने की इजाजत है तथापि पर्दानशीनी की बला नही टलती । देखो संस्कार विधि प्रथम संस्करण संवत १९३३ पृ. ६५ पं. १६ " तदनन्तर एकवस्त्रसै उसका और अपना शिरसै स्कंधतक ढांकके हाथसे शिष्यके हाथ ग्रहण करके इस मंत्रका उपदेश तीनों वर्णों को पिता करै किंवा आचार्य "

देखो संस्कार विधि सप्तम आवृत्ति सं. १९६५ विक्रम पृ. ९ पं. ३ " तत्पश्चात् आचार्य एक वस्त्र अपने और बालक के कंधे पर रख के अपने हाथ से बालकके दोनो हाथ की दोनों अंगुलियों को पकड के नीचे लिखे प्रमाणे बालक को तीन बार करके गायत्री मंत्रोपदेश करे "

इस ३२ वर्षमें गायत्रीके नसीब से इतनी आजादी मिली है कि सिरसै स्कंधतक न ढांक कर, वस्त्र कंधे पर आगया है ॥ स्मार्त बांधव तो गायत्री को धोती अंगोछाके पल्ले या गोमुखी सै बाहर जाने ही नहीं देते । बस यही अवगुंठन है ॥

प्रवेश)

विधि भक्ति और जपमाला आगे बढ़कर गायत्री को आदर सहित लेती हैं (२०)

गायत्री—(संकुचित होती है)

विधि भक्ति—(गायत्री का अवगुंठन खोलकर मुख देखती है] [२१]

जपमाला—(गायत्री के पीछे होलेती है)

गायत्री----(संध्यासे) ये सब कौन कौन है ?

संध्या----ये विधि भक्ति हैं ये ही तुमे लाड करैंगी (२२] ये तुलसीमाला तुम्हारी अनुचरी रहैगी [२३]

कंठमाला----बढकर मंत्रराज का साथ लेती है [२४]

श्रद्धा—(यज्ञोपवीत से) ये यहां की प्रधान हैं इनका पाद स्पर्श करो (२५)

यज्ञोपवीत—(कंठमाला के पाद स्पर्श करता है)

कंठमाला—(यज्ञोपवीत के सिर पर हाथ रखकर) बढ़ा

---

(२०) विधि भक्तिमें संध्या गायत्री का विधान है ॥

(२१) नित्यकृत्यके समय गायत्री जप कर लेना ही मुख खोलकर देखना है ॥

(२२) यही लाड करना है कि आन्हिक के पूर्व गायत्री जप होता है ॥

(२३) स्मार्त विधानमें गायत्री का जप रुद्राक्षमाला वा स्फटिक माला पर होता है । वहां वे अनुचरी थी, वैष्णव जन तुलसी मालासे गायत्री जप करते हैं इससे यहां यह अनुचरी है ।

[२४] कंठमाला दीक्षा का अंग है सुतरां मंत्र ग्रहण के समय ही गुरुदेव कृपाकर कंठमाला [कंठी] देते है ।

[२५] कंठमाला कंठमें उच्च भूमिका पर है यज्ञोपवीत उससै नीचेस्थल पर स्कंध पर लंबित है यही पाद स्पर्श है ।

सौम्यबालक है यह इतना कृश क्यों है ?

श्रद्धा—ब्रह्मचर्य के क्लेशसे, अब आप इसे भागवत धर्म शिक्षा कीजिये ये कुछ दिन आपके निकट रहेगा (२६)

विधि भक्ति—भ्राता भगिनीमें ऐसा ही स्नेह होता है दोनोंएक साथ रहेंगे अच्छा है (यज्ञोपवीतसे) तुम्हारी बहन का भी मन लगा रहेगा।

यज्ञोपवीत—जो आज्ञा (संध्यासे] इन सबके तेजसे मेरा हृदय कांपता है।

संध्या—तुम इधर आओ [यज्ञोपवीत को विधि भक्तिके पीछे कर देती है [२७]

रागभक्ति—मंत्रराज के तेज मे नववधूटी गायत्री ऐसी लीन होगई है जैसे सूर्यालोकमे तारामंडल।

नेपथ्यमे

जय जय जय गोपतनय मंत्रराज राज
सप्तकोटि महामंत्र समुदय सिरताज।
कर्म निष्ठ ईष्टी कर यज्ञरूप ध्यामे,
ज्ञान निष्ठ मत चित कहि ब्रह्म तत्व गामे॥
योगनिष्ठ, परमात्मा कहि समाधि धारैं
वैधभक्त, देवदेव विष्णु कहि पुकारैं॥
रागभक्त, ब्रजपतिसुतरूप ध्यान लावै
रसिक जनन प्राणरमण बिनु न आन भावै॥
मंत्र देव एक रूप मंत्रराज सोई

---

[२६] भावभक्ति निष्ठ साधक, जब 'अवधूत' वेष ग्रहण कर वर्णाश्रमाचार अतिक्रम करते है तब यज्ञोपवीत त्याग देते हैं, पर कंठमाला नही त्यागते यही यज्ञोपवीत का कंठमालाके निकट'कुछ—दिन' रहना है।

वैष्णव गुरु करुणा बिन पावत नहीं कोई ॥

प्रेम—आहा ! सुर्षि नारद वीणामें मंत्रराज का स्तवगान करते भावावेश में मत्त डगमगाते आरहे हैं।

नारद जी का प्रवेश

नारद—आदि गुरु चतुर्मुखने मुझसे कहा है अब-मानुषी सृष्टिका समय अति सन्निहित है। मनुष्यों के धार्मिक सामाजिक और नैतिक समस्त तत्त्वों के मूल वेद हैं। यह गायत्री वेद माता है मंत्रराजके और गायत्री के संमिलन से ऋक यजु-साम और अथर्व वेद का जन्म होगा। आहा अब हम वेदके मंत्रोंको वीणामें मिलाकर भगवान का स्तव किया करेंगे (आगे बढकर) यहमंत्र राज और गायत्री का नव युगल है (अभिनिवेशसे देखकर) मंत्रराज के श्याम तेज में गायत्री विद्युतके समान झलमलाती है। कभी अदृश्य होती है कभी दृश्य, यही तो शक्ति और शक्तिमानका अचिन्त्य भेदा भेद है।

मंत्रराज—सुर्षे ! अब तो प्रसन्न हुए ?

नारद—मैं और मेरे जनक कमलासन भी।

मंत्रराज—वेदोंके प्राकट्य को हिरण्य गर्भने यह कौशल किया है। यह 'गायत्रीका उद्वाह' चतुर्मुख की और तुम्हारी प्रीतिके लिये मैने किया है। और तुम्हारी क्या प्रीति करूं ?

नारद—इससे अधिक हमारी और क्या प्रीति होगी कि हम भावराज्य में प्रवेश कर आपकी इस परम रहस्य लीलाके दर्शनके अधिकारी हुए।

तथापि यह प्रार्थना है।

जो कर्मनिध्र भ्रमते कबहू न जानै,
  निर्ग्रंथ मुक्ति पद त्याग सदैव वांछे।
जोवैध रागभजनाध्व-निविष्ट भोग्य,
  वोप्रेम नाम मसुरै कालि जीव पावें।

मंत्रराज—तथास्तु

नारद—यह अन्तःपुर का द्वार है श्रीपाद प्रवेश कर विवाह के उत्तमांग मंगलका सम्पादन करें।

सब जाते हैं

यवनिका पतन

केवल परोपकारार्थ

मकरध्वज रस

आयुर्वेद की यह सर्वोत्तम औषधि कलकत्ता, बम्बई आदि नगरो में अधिक मूल्य से मिलने के कारण साधारणजन इसका लाभ नहीं उठा सकते हैं। हमने व्यय मात्र मूल्यनिर्द्धार कर गरीबो के लिये बांटने का प्रबन्ध किया है केवल ३२) रु. तोले ॥

मोमि आई

गिरकर मूर्छित होना, चोटसे मूर्छित होना, दुर्बलता हृदय के रोग, मृगी, आदिकमें अद्भुत उपकार करने वाली यह औषधि हकीम जालीनूस के विधान से बनी है केवल ५) रु. तोले।

सुधा

साठ रोगोंकी एक अव्यर्थ महौषधि मूल्य १) शीशी

सोमांजन

एक सलाई एक आंख में लगाइये जब उसकी ज्योति उस ही समय अधिक होजाय तब दूसरी आंख में लगाना मूल्य ।) शीशी

शुश्रूषा

जीव मात्रका शुश्रूषा करना श्रीवैष्णव धर्म का एक अंग। धनी निर्धन सब को कठिन रोगो की औषधि विना मूल्य दान की जाती हैं।

मैनेजर वैष्णव सद्धर्मसदन

बृन्दावन